शंकर का मायावाद (Shankara's Theory of Maya)

शंकराचार्य के अनुसार माया ईश्वर की शक्ति है। यह माया ही है जो ब्रह्म के स्वरूप पर पर्दा डालकर उसे विश्व के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करती है। यह ईश्वरीय शक्ति से पृथक नहीं है। जिस प्रकार लौ प्रकाश से अलग नही रह सकती उसी माया भी ईश्वर से पृथक नहीं रह सकती। इस प्रकार से माया ईश्वर रूपी जादूगर का जादू है।

अद्वैत वेदान्त में माया एवं अविद्या का प्रयोग एक ही अर्थ में हुआ है। जिस प्रकार शंकर ने कहा है कि ब्रह्म एवं आत्मा में तादात्म्य संबंध है, उसी प्रकार माया एवं अविद्या अभिन्न है। माया को यहाँ पर अविद्या, अध्यास, भ्रम, अध्यारोप, भ्रान्ति, विवर्त, नामरूप, अव्यक्त एवं मूल प्रकृति आदि नामों से भी जाना जाता है। परवर्ती वेदान्तियों ने माया एवं अविद्या में अन्तर किया है, जो निम्न हैं—

(i)- माया भावात्मक है, किंतु अविद्या निषेधात्मक। ब्रह्म माया के द्वारा विश्व का प्रदर्शन करता है। विश्व को प्रस्थापित करना ही माया का कार्य है, इसलिए इसे भावात्मक कहते हैं। इसके विपरित, अविद्या का अर्थ ज्ञान का अभाव है, इसलिए इसे निषेधात्मक कहा जाता है।

(ii)- माया ईश्वर को प्रभावित करती है, किंतु अविद्या जीवों को प्रभावित करती है।

(iii)- ज्ञान के उदय होते ही अविद्या नष्ट हो जाती है, किंतु माया का नाश नहीं होता है, यह तो ईश्वर की शक्ति है।

(iv). माया सत्व गुण से निर्मित है, जबकि अविद्या सत्व, रज और तम तीनों गुणों से निर्मित है।

(v). माया सात्विक है जबकि अविद्या त्रिगुणात्मक है।

(vi) माया विश्व को प्रस्थापित करती है, अविद्या ज्ञान का अभाव है।

वास्तव में माया और अविद्या एक ही वस्तु के दो पहलू हैं। माया का आश्रय स्थल ब्रह्म है, फिर भी ब्रह्म माया से प्रभावित नहीं होता है। जिस प्रकार जादूगर अपने जादू से प्रभावित नहीं होता, उसी प्रकार ब्रह्म भी माया से प्रभावित नहीं होता। चूँकि माया का निवास अनादि ब्रह्म में है, इसलिए माया भी ब्रह्म की भाँति अनादि है। माया एवं ब्रह्म के बीच में तादात्म्य सम्बन्ध है।

माया के कार्य :- माया के कारण वस्तुओं का यथार्थ रूप ढक जाता है, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप वस्तुओं पर आवरण पड़ जाता है। जिस प्रकार रज्जु में प्रतीत होने वाला सर्प रज्जु के वास्तविक स्वरूप पर आवरण डाल देता है, उसी प्रकार माया सत्य पर परदा डाल देती है। यह माया का निषेधात्मक कार्य है, जिसे 'आवरण' कहते हैं। इसके अतिरिक्त माया सत्य के स्थान पर किसी अन्य वस्तु को उपस्थापित करती है। माया केवल रज्जु के यथार्थ स्वरूप पर परदा ही नहीं डालती है, अपितु रज्जु के स्थान पर सर्प की प्रतीति कराती है। माया के इस कार्य को 'विक्षेप' कहते हैं। निषेधात्मक कार्य के कारण माया ब्रह्म पर परदा डाल देती है तथा निषेधात्मक कार्य के कारण ब्रह्म के स्थान पर नानाविध जगत् को प्रस्तुत करती है। यहाँ पर ध्यान देने की बात यह है कि यहाँ पर 'आवरण' का अर्थ है - 'यथार्थ स्वरूप को ढक देना' तथा 'विक्षेप' का अर्थ है - 'दूसरी वस्तु का आरोप कर देना'। ये दोनों ही अविद्या या अज्ञान के कार्य हैं, जिनके द्वारा भ्रम उत्पन्न होता है।

माया की विशेषताएँ :→

शंकर ने माया के गुणों अथवा विशेषताओं का वर्णन करते हुए कहा है कि :-

(1)- माया ब्रह्म का विवर्त है। यह अध्यास (Super-imposition) रूप कही जा सकती है। माया के कारण ही ब्रह्म विश्व रूप में रूपांतरित दीख पड़ता है, किंतु वास्तव में ब्रह्म विश्व में रूपांतरित नहीं होता। इसका मात्र आभास होता है।

(2)- माया अनिर्वचनीय है। इसे न तो 'सत्' कहा जा सकता है और न असत्। यह सत् नहीं कही जा सकती, क्योंकि यह ब्रह्म से स्वतंत्र नहीं है। इसे असत् भी नहीं कहा जा सकता; क्योंकि इसी के द्वारा विश्व ब्रह्म का रूपांतर एवं नानारूपात्मक दीख पड़ता है। इसीलिए इसे अनिर्वचनीय कहना उपयुक्त है।

(3)- माया ब्रह्म की आंतरिक शक्ति है। इसी शक्ति के द्वारा ब्रह्म नानारूपात्मक विश्व को प्रदर्शित करता है।

(4)- माया अनादि है। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि जगत् की वास्तविकता का भ्रम कब आरंभ हुआ।

(5)- माया का अंत सम्यक् ज्ञान द्वारा ही संभव है।

(6)- माया ब्रह्म में निवास तो करती है किंतु ब्रह्म को प्रभावित या सीमित नहीं कर पाती।

(7)- माया ब्रह्म के विपरीत अचेतन कही जाती है।

(8)- माया क्षणिक है। अनादि है, ज्ञाननिरस्या है एवं भावरूप है।

(9)- माया सांख्य की प्रकृति की भाँति जड़ एवं भौतिक है। सूक्ष्म होने के कारण यह भौतिक होने के साथ ही अव्यक्त भी है।

(10)- माया की व्यावहारिक उपयोगिता है। इसी के द्वारा विश्व को हम वास्तविक मानकर अपने व्यावहारिक जीवन में कार्य करते रहते हैं। यदि विश्व की वास्तविकता के विषय में

संदेह हो, तो फिर कार्य बन्द हो सकते हैं। किंतु, माया हमें विश्व की वास्तविकता में विश्वास दिलाकर व्यावहारिक क्षेत्र में आगे बढ़ाती रहती है।

(11)- अध्यास- माया अध्यारूप है। यह भ्रांति या भ्रम है। अध्यास दो शब्दों से मिलकर बना है - अधि + आस। 'अधि' का अर्थ है - 'ऊपर' और 'आस' का अर्थ है - 'बैठना'। इस तरह अध्यास आरोपण है। किंतु यह मिथ्या आरोपण है जिसमें 'जो है' उस पर 'जो नहीं है' उसका आरोपण हम करते हैं। जैसे रस्सी पर साँप का मिथ्या आरोपण है। यह भी एक अध्यास है। अध्यास के कारण ही निर्गुण ब्रह्म में जगत् अध्यासित होता है। माया के कारण अविद्या होता है, अतएव इसे मूलाविद्या भी कहते हैं।

(12)- माया केवल जीव को मोहित करने का सामर्थ्य रखती है, ईश्वर को नहीं। जिस तरह कोई जादूगर अपने जादू से प्रभावित नहीं होता, उसी तरह ईश्वर भी माया से प्रभावित नहीं होता।

इस प्रकार से शंकराचार्य के अनुसार ब्रह्म की शक्ति है, लेकिन यह ब्रह्म का नित्य स्वरूप नहीं है। यह एक इच्छामात्र है, जिसे चाहने पर ब्रह्म के द्वारा परित्याग किया जा सकता है। शक्ति रूप में माया, ब्रह्म से भिन्न पदार्थ नहीं है। शक्ति ब्रह्म से उसी प्रकार अभिन्न एवं अवियोज्य है, जिस प्रकार दाहकता अग्नि से।